श्रद्धावाननसूयश्च शृणुयादपि यो नरः।
सोऽपि मुक्तः शुभाँल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम्।।७१।।

श्रद्धावान्=श्रद्धा से पूर्ण हृदय वाला; **अनसूयः**=द्वेषरहित; **च**=और; **शृणुयात् अपि**=श्रवण भी करेगा; **यः**=जो; **नरः**=मनुष्य; **सः अपि**=वह भी; **मुक्तः**=मुक्त हुआ; **शुभान्**=उत्तम; **लोकान्**=लोकों को; **प्राप्नुयात**=प्राप्त होगा; **पुण्यकर्मणाम्**=पुण्यात्मा पुरुषों के।

अनुवाद

जो कोई द्वेषरहित पुरुष श्रद्धाभाव के साथ इस गीताशास्त्र का श्रवण करेगा, वह भी पापों से मुक्त होकर पुण्यात्माओं के लोकों को प्राप्त होगा।।७१।।

तात्पर्य

सड़सठवें श्लोक में श्रीभगवान् ने स्पष्ट कहा है कि जो उनसे द्वेष करते हैं उन्हें गीता न सुनाये। भाव यह है कि भगवद्गीता केवल भक्तों के लिए है। परन्तु कभी-कभी ऐसा भी होता है कि भगवद्भक्त इस का जनसाधारण में पाठ करते हैं। ऐसे वर्ग में सब भक्त नहीं होते। भक्त के इस कार्य का औचित्य दिखाते हुए श्रीभगवान् कहते हैं कि सुनने वाले सब मनुष्य भक्त नहीं होते, यह सत्य है; परन्तु उनमें से बहुत से ऐसे हैं, जो श्रीकृष्ण से द्वेष नहीं करते। वे श्रद्धावान् हैं, उन्हें भगवान् मानते हैं। यदि इस कोटि के पुरुष सच्चे भक्त के मुखारविन्द से भगवत्कथामृत का श्रवण करें, तो परिणाम में तत्काल सम्पूर्ण पापों से मुक्त हो कर पुण्यवानों के लोकों को प्राप्त हो सकते हैं। अतएव जो शुद्धभक्त बनने के लिए प्रयत्न तक नहीं करता, भगवद्गीता के श्रवणमात्र से वह मनुष्य भी पुण्यकर्मों के फल को प्राप्त हो जाता है। अतः शुद्धभगवद्भक्त गीतामृत प्रदान कर प्राणीमात्र को सम्पूर्ण पाप-बन्धनों से छूटकर भगवद्भक्त बनने का अवसर देता है।

पापमुक्त पुरुष सामान्यतः पुण्यकर्मों के परायण रहते हैं। इसलिए वे कृष्णभावना को बड़े सहज रूप में अंगीकार कर लेते हैं। **पुण्यकर्मणाम्** शब्द यज्ञ करने वाले मनुष्यों का भी वाचक है। जो पुण्यात्मा पुरुष भक्तियोग का आचरण करते हैं, परन्तु शुद्ध नहीं हैं, वे ध्रुव आदि लोकों को प्राप्त कर सकते हैं। ध्रुव महाराज भगवान् के महान् भक्त हुए हैं, इसलिए उनका अपना ध्रुवलोक है।

कच्चिदेतच्छ्रुतं पार्थ त्वयैकाग्रेण चतेसा।
कच्चिदज्ञानसंमोहः प्रनष्टस्ते धनञ्जय।।७२।।

कच्चित्=क्या; **एतत्**=यह (शास्त्र); **श्रुतम्**=सुना; **पार्थ**=हे अर्जुन; **त्वया**=तेरे द्वारा; **एकाग्रेण**=एकाग्र; **चेतसा**=मन से; **कच्चित्**=क्या; **अज्ञान**=अज्ञान; **संमोहः**=मोह; **प्रनष्टः**=नष्ट हो गया; **ते**=तेरा; **धनञ्जय**=हे अर्जुन।

अनुवाद

हे अर्जुन! क्या तूने यह शास्त्र एकाग्रचित्त से सुना और क्या इससे तेरा अज्ञान और मोह नष्ट हो गया?।।७२।।